दुष्यन्त का चरित्र-चित्रण

अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक का प्रधान नायक राजा दुष्यन्त है। वह धीरोदात्त कोटि का नायक है। अत्यधिक वीरता, गम्भीरता, क्षमा, स्थिरता, गर्वराहित्य इत्यादि गुण धीरोदात्त नायक के विद्यमान होते हैं और दुष्यन्त में ये सभी गुण उपलब्ध हैं। सुन्दर तथा गम्भीर आकृति वाला वह पुरुवंशी क्षत्रिय राजा है। वह प्रभावशाली तथा मधुरभाषी है। वह बलवान तथा पराक्रमी है। मृगया के समय उसका सेनापति कहता है- "महाराज पर्वत पर घूमने वाले हाथी के समान बलस्वरूप सार वाले शरीर को धारण किए हुए हैं जिसका पूर्वभाग निरंतर धनुष की प्रत्यंचा के खींचने के कारण कठोर हो गया है, जो सूर्य की किरणों को सहन करने में समर्थ है, जो पसीने की बूंदों से रहित है, जो कृश होने पर भी पुष्टता के कारण दुर्बल नहीं दिखाई देता है।(अभिज्ञान॰, २।४)। कण्व-आश्रम का शिष्य उसकी बलशालिता पर कहता है-

का कथा बाणसन्धाने ज्याशब्देनैव दूरतः। हुंकारेणैव धनुष: स हि विघ्नानपोहति॥ (अभिज्ञान॰ ३.१)

ऐसा होते हुए भी वह विनय से सम्पन्न है। उसकी पराक्रमशीलता एवं शूरवीरता से इन्द्र भी प्रभावित हैं और अपनी सहायता के लिये उसे बुलाते हैं । दानवों के वधार्थ राजा को स्वर्ग में जाना पड़ता है। उसकी प्रत्यञ्चा की टंकार मात्र से विघ्न दूर हो जाते हैं। उसके राज्य में निकृष्ट लोग भी कुमार्गगामी नहीं हैं । लता, वृक्ष तथा पक्षी भी उसका शासन मानते हैं । राजर्षि महाप्रभावशाली है। वह मृगयाप्रेमी भी है- कृष्णसारे ददच्चक्षुस्त्वयि चाधिज्यकार्मुके। मृगानुसारिणं साक्षात्पश्यामीव पिनाकिनम्॥ (अभिज्ञान॰१।६)।

वह मधुरभाषी है। प्रियंवदा द्वारा उसके मधुर भाषण की प्रशंसा की गई है। जिस प्रकार का मनोहर उसका बाह्य रूप है, उसी प्रकार का वह हृदय से भी है। उसका स्वभाव अत्यन्त स्निग्ध, ललित एवं सुसंस्कृत है । शकुन्तला के साथ हुआ प्रणय-सम्भाषण इस बात का द्योतक है । शकुन्तला के अपूर्व रूप-लावण्य का अवलोकन कर उसकी ओर आकर्षित हो जाना स्वाभाविक ही था; किन्तु एक भद्र पुरुष की तरह उसने यह पता लगा लेना अत्यन्त आवश्यक समझा कि उसका विवाह हो चुका

है या नहीं, उसके साथ प्रेम करना धर्मानुकूल है अथवा नहीं। यह ज्ञात हो जाने पर ही वह शकुन्तला के प्रति अनुरक्त होता है। वह बहुपत्नीक भी है। किन्तु ऐसा होने पर भी शकुन्तला के प्रति उसका स्नेह वास्तविक तथा छल आदि से रहित है-

परिग्रहबहुत्वेऽपि द्वे प्रतिष्ठे कुलस्य मे। समुद्ररसना चोर्वी सखी च युवयोरियम्॥ (अभिज्ञान॰ ३।१७)।

वह ललित-कलाओं का अच्छा ज्ञाता है। रानी हंसपदिका के संगीत का श्रवणकर उसके द्वारा "अहो रागपरिवाहिनी गीतिः" यह कहा जाना उसके संगीत-कलाभिज्ञ होने का परिचायक है। वह प्रकृति का प्रेमी और सूक्ष्म निरीक्षक है। वह एक कुशल चित्रकार भी है।

इतना सब कुछ होने पर भी उसमें मानवोचित दुर्बलतायें भी हैं। मृगया के लिये भ्रमण करते हुए आश्रम में प्रविष्ट होने के पश्चात् शकुन्तला को देखकर यथासंभव उसका पतन ही हुआ है। लुक-छिपकर युवती कन्याओं की विनोदसम्पन्न कीडाओं को देखना, भेंट होने पर अपना मिथ्या परिचय देना, शकुन्तला को देखते ही उसे उपभोग-योग्य स्त्री समझ लेना, माता द्वारा बुलाये जाने के सन्देश को प्राप्त कर केवल शकुन्तला के प्रेम में लीन होने के कारण अपने स्थान पर विदुषक को राजधानी भेज देना और उससे असत्य कहवाना, विवाह के पश्चात् ऋषि कण्व के आगमन के पूर्व ही हस्तिनापुर लौट जाना आदि अनेक ऐसे कार्य हैं जिनसे उसकी मानवोचित दुर्बलताओं का स्पष्ट पता चल जाता है। हस्तिनापुर आ जाने के पश्चात् शकुन्तला को एकदम भूल जाना और उसके द्वारा स्वयं ही वहाँ आ उपस्थित होने पर भी उसे न पहिचान पाना इत्यादि उसके पतन की अन्तिम सीमा है। किन्तु इसके पश्चात् महाकवि ने उसके चरित्र को बड़ी चतुराई और योग्यता से ऊपर उठाया है।

किसी भी मनोहर युवती को देखकर मोहित हो जाने की मधुकर-वृत्ति उसमें नहीं है- "अनिवर्णनीयं परकलत्रम्" तथा "अनार्यः परदारव्यवहार:। पंचम अङ्क में उसके अत्यन्त धार्मिक तथा सांस्कृतिक होने का स्पष्ट पता लगता है। एक असाधारण रूपसम्पन्न युवती उसके समक्ष खड़ी है और वह अपने को उसकी पत्नी बतला रही है। एक ओर अलौकिक रूप है, महर्षि कण्व का क्रोध है और स्त्री द्वारा किया जाता हआ

अनुनय-विनय । किन्तु इतना सब कुछ होने भी राजा दूसरी ओर विद्यमान धर्म सम्बन्धी भय के कारण भयभीत है। राजा द्वारा उसे स्वीकार न किये जाने के दृश्य को देखकर प्रतीहारी अपने मन में कहने ही लगती है "अहो धर्मापेक्षिता भर्तु:"। ईदृशं नाम सुखोपनतं रूपं दृष्ट्वा कोऽन्यो विचारयति"।

षष्ठ अङ्क में अंगूठी के दर्शन के बाद दुष्यन्त को शकुन्तला के साथ हुए परिणय का स्मरण हो जाता है । उसको महान् पश्चात्ताप है। इसी कारण वह राज्यभर में होने वाले वसन्तोत्सव को बन्द करा देता है। सुन्दर वस्तुएँ भी उसे प्रिय नहीं प्रतीत होती हैं। शोक की चरम सीमा में विद्यमान होने पर भी वह अपने कर्तव्य को भूला नहीं है। धर्म एवं न्याय के आधार पर वह राज्य-कार्य में संलग्न है। धनमित्र नामक वणिक् से संबन्धित घटना उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है जब अङ्क ६ श्लोक २३ से पूर्व प्रतीहारी और राजा का वार्तालाप होता है। उपर्युक्त स्थिति में विद्यमान होने पर भी राक्षसों से युद्ध करने के निमित्त इन्द्र का सन्देश मिलने पर वह तुरन्त ही बड़े उत्साह के साथ राक्षसों का हनन करने हेतु चल देता है। उसके कर्तव्य-परायण होने का एक यह भी स्पष्ट प्रमाण है।

सप्तम अङ्क में राजा का चरित्र और भी उन्नत हआ है। यहाँ पर राजा की शिशुवत्सलता का स्पष्ट परिचय मिलता है। शकुन्तला जब राजा दुष्यन्त को देखती है तो उसकी आँखों में अश्रुधारा आ जाती है और उसका गला रुंध आता है। यह देखकर राजा उसके चरणों पर गिरकर उससे क्षमायाचना करता है।

इस प्रकार महाकवि ने दुष्यन्त के चरित्र में क्रमिक विकास दिखलाया है। जो राजा प्रारम्भ में एक साधारण कामुक पुरुष प्रतीत होता था वही बाद में एक सच्चे प्रेमी, कर्तव्यपरायण, विनम्र, धार्मिक और पुत्रवत्सल आदि अनेक रूपों में दृष्टिगोचर होता है।

इसमें सन्देह नहीं कि महाकवि ने दृष्यन्त के चरित्र को महान् एवं श्रेष्ठ बनाने का पूर्ण प्रयास किया है किन्तु फिर भी वे दुष्यन्त को समाज के लिये एक पूर्ण आदर्श पुरुष के रूप में उपस्थित न कर सके । चन्द्र का कलङ्क ज्यों का त्यों बना ही रहा । परिणामतः दुष्यन्त के चरित्र को दोष एवं गुण दोनों से ही मिश्रित है।